10

कथा-पटकथा

पटकथा कुछ और नहीं कैमरे से फ़िल्म के परदे पर दिखाए जाने के लिए लिखी हुई कथा है।

–मनोहर श्याम जोशी

पटकथा लेखक, पत्रकार एवं साहित्यकार

इस पाठ में...

- पटकथा– स्रोत, स्वरूप और संरचना
- नाटक व फ़िल्म की पटकथा में अंतर
- पटकथा लेखन का प्रारूप
- पटकथा और कंप्यूटर

मशहूर साहित्यकार और कई कामयाब टेलीविज़न धारावाहिकों के लेखक स्वर्गीय मनोहर श्याम जोशी ने कई उपन्यासों आदि के साथ-साथ एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक है–*पटकथा लेखन–एक परिचय।* इसी पुस्तक के दूसरे अध्याय का शीर्षक है– 'पटकथा क्या बला है?' संभव है, शायद कुछ इसी प्रकार का विचार आपके मन में भी उठ रहा हो। तो, सबसे पहले शब्द पटकथा! ये दो शब्दों के मेल से बना है–'पट' और 'कथा'। कथा का मतलब आप सभी जानते हैं–कहानी। और पट का अर्थ होता है–परदा! अर्थात ऐसी कथा जो परदे पर दिखाई जाए। चाहे वो परदा बड़ा हो या छोटा। यानी कि सिनेमा और टेलीविज़न दोनों ही माध्यमों के लिए बनने वाली फ़िल्मों, धारावाहिकों आदि का मूल आधार पटकथा ही होती है। इसी के अनुसार निर्देशक अपनी शूटिंग की योजना बनाता है, अभिनेताओं को अपनी भूमिका की बारीकियाँ और संवादों की जानकारी मिलती है तथा

कैमरे के पीछे काम करने वाले तकनीशियनों और सहायकों को अपने-अपने विभागों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। कथानक तो इसका एक अभिन्न हिस्सा होता ही है।

किसी भी फ़िल्म यूनिट या धारावाहिक बनाने वाली कंपनी को 'पटकथा' तैयार करने के लिए, सबसे पहले जो चीज़ चाहिए होती है, वो है 'कथा'। कथा ही नहीं होगी तो पटकथा कैसे बनेगी? अब सवाल यह उठता है कि यह कथा या कहानी हमें कहाँ से मिलेगी? तो इसके कई स्रोत हो सकते हैं—हमारे स्वयं के साथ या आसपास की ज़िंदगी में घटी कोई घटना, अखबार में छपा कोई समाचार, हमारी कल्पनाशक्ति से उपजी कोई कहानी, इतिहास के पन्नों से झाँकता कोई व्यक्तित्व या सच्चा किस्सा अथवा साहित्य की किसी अन्य विधा की कोई रचना। मशहूर उपन्यासों-कहानियों पर फ़िल्म या सीरियल बनाने की परंपरा काफ़ी पुरानी है। अभी कुछ वर्ष पूर्व ही शरत्चंद्र चट्टोपाध्याय के प्रसिद्ध उपन्यास *देवदास* को हिंदी में तीसरी बार फ़िल्माया गया। इसके अलावा भी हिंदी के कई जाने-माने लेखकों—मुंशी प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, मन्नू भंडारी आदि की तमाम रचनाओं को समय-समय पर रुपहले परदे पर उतारा गया है। दूरदर्शन तो अकसर ही साहित्यिक-रचनाओं को आधार बना कर धारावाहिक, टेलीफ़िल्में आदि का निर्माण करवाता रहता है। अमेरिका-यूरोप में तो ज़्यादातर कामयाब उपन्यास और नाटक फ़िल्म का विषय बन जाते हैं।

इस तरीके से आपके विषय की समस्या तो हल हुई, अब मसला उठता है पटकथा लिखने का। इसमें हम सबसे पहले देखेंगे कि पटकथा की संरचना या ढाँचा किस तरह तैयार होता है? फ़िल्म या टी.वी. की पटकथा की संरचना नाटक की संरचना से बहुत मिलती है। अंग्रेज़ी में तो इसे कहते ही 'स्क्रीनप्ले' हैं। नाटक की तरह ही यहाँ भी पात्र-चरित्र होते हैं, नायक-प्रतिनायक होते हैं, अलग-अलग घटनास्थल होते हैं, दृश्य होते हैं, कहानी का क्रमिक विकास होता है, द्वंद्व-टकराहट और फिर समाधान। ये सब कुछ पटकथा के भी आवश्यक अंग होते हैं। मंच के नाटक और फ़िल्म की पटकथा में कुछ मूलभूत अंतर भी होते हैं। पहली चीज़ है दृश्य की लंबाई, नाटक के दृश्य अकसर अधिक लंबे होते हैं और फ़िल्मों में छोटे-छोटे। इसी प्रकार नाटक में आमतौर पर सीमित घटनास्थल होते हैं, जबकि फ़िल्म में इसकी कोई सीमा नहीं, हर दृश्य किसी नए स्थान पर घटित हो सकता है। इसकी वजह है दोनों माध्यमों में मूलभूत अंतर—नाटक एक सजीव कला माध्यम है, जहाँ अभिनेता अपने ही जैसे जीवंत दर्शकों के सामने, अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। सब कुछ वहीं, उसी वक्त घट रहा होता है। जबकि सिनेमा या टेलीविज़न में पूर्व रिकॉर्डेड छवियाँ एवं ध्वनियाँ होती हैं। नाटक का पूरा कार्य-व्यापार एक ही मंच पर घटित होता है एक निश्चित अवधि के दौरान। जबकि फ़िल्म या टेलीविज़न की शूटिंग अलग-अलग सेटों या लोकेशनों पर दो दिन से लेकर दो साल तक की अवधि में की जा सकती है इसीलिए नाटक का कार्य-व्यापार, दृश्यों की संरचना और चरित्रों की संख्या आदि को सीमित रखना पड़ता है, लेकिन सिनेमा या टेलीविज़न में ऐसा कोई बंधन नहीं होता। सबसे बड़ी बात नाटक की कथा का विकास 'लीनियर' मतलब एक-रेखीय होता है, जो एक ही दिशा में आगे बढ़ता है। जबकि सिनेमा में फ़्लैशबैक या फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीकों का इस्तेमाल करके आप घटनाक्रम को किसी भी रूप

में प्रस्तुत कर सकते हैं। फ़्लैशबैक वो तकनीक होती है, जिसमें आप अतीत में घटी किसी घटना को दिखाते हैं और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड में आप भविष्य में होने वाले किसी हादसे को पहले दिखा देते हैं। इन दोनों तकनीकों को हम एक-एक उदाहरण से समझने की कोशिश करते हैं। मान लीजिए हम रांगेय-राघव की कहानी गूँगे पर फ़िल्म बना रहे हैं, और हमारी फ़िल्म शुरू होती है सड़क के दृश्य से (जहाँ कुछ किशोर लड़के मिलकर एक दुबले-पतले लड़के को पीट रहे हैं। मार खा रहा लड़का भाग कर एक घर के दरवाज़े पर पहुँचता है। घर के भीतर से भाग कर चमेली आती है, उसके साथ उसके छोटे-छोटे बच्चे शकुंतला और बसंता भी हैं। चमेली घर की दहलीज़ पर सर रखे, खून से लथपथ गूँगे को देखती है, जो अपनी व्यथा को व्यक्त करने में असमर्थ है। और चमेली को वो दिन याद आता है, जिस दिन अनाथालय में पहली बार उसकी मुलाकात गूँगे से हुई थी। अब हम पागलखाने का वो दृश्य दिखाते हैं, जहाँ कुछ दिन पहले चमेली अपनी सहेलियों के साथ गई थी और जहाँ पहली बार उसकी गूँगे से मुलाकात हुई थी।) यही, वर्तमान से अतीत में जाना, फ़्लैशबैक की तकनीक कहलाता है। फ़्लैश फ़ॉरवर्ड समझने के लिए हम मोहन राकेश के नाटक *अंडे के छिलके* का वो दृश्य लेते हैं जहाँ श्याम के बाज़ार जाने के बाद वीना घर ठीक-ठाक कर रही है और उसे वो मोज़ा मिलता है जिसमें अंडे के छिलके भरे हुए हैं। वैसे मूल नाटक में यह दृश्य इस प्रकार नहीं है लेकिन अगर इसकी पटकथा लिखी जाए और हम इस दृश्य में फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीक का प्रयोग करें तो दृश्य कुछ इस तरह से बनाया जा सकता है कि अचानक वीना के मन में यह विचार कौंधता है कि ये मोज़े उसकी सास जमुना देवी के हाथों लग गए हैं (वो पूरे परिवार तथा पड़ोसियों के सामने मोज़ों में से अंडे के छिलके ज़मीन पर गिरा कर उसे बुरा-भला कह रही हैं। हम वापस वर्तमान में आते हैं और वीना अपना संवाद पूरा करती है–"कितनी बार कहा छिलके मोज़े में मत रखा करो, कहीं किसी के हाथ लग गए, तो लेने के देने पड़ जाएँगे।" और चाय का पानी हीटर पर रखने के लिए चली जाती है।)

यहाँ एक तथ्य गौर करने लायक है, वो यह कि फ़्लैशबैक और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड दोनों ही युक्तियों का इस्तेमाल करने के पश्चात हमें वापस वर्तमान में आना ज़रूरी है। ताकि दर्शकों के मन में किसी किस्म का असमंजस न रहे। फ़िल्म या टेलीविज़न माध्यम में एक सुविधा यह भी है कि एक ही समय-खंड में अलग-अलग स्थानों पर क्या घटित हो रहा है, दिखाया जा सकता है। मसलन, हम दिखाते हैं हमारा कम पढ़ा-लिखा नायक, गाँव में नदी में डूबते एक बच्चे की जान बचाता है, ठीक उसी समय हज़ारों मील दूर किसी महानगर में रहने वाला हमारा नायक अपनी बेशकीमती विदेशी कार से एक बूढ़े फेरीवाले को टक्कर मार देता है। कालांतर में दोनों नायकों की मुलाकात देश की राजधानी में होती है, नायक न. 1 अब बहुत बड़ा मज़दूर नेता बन गया है और नायक न. 2 एक कामयाब उद्योगपति। मतलब ये कि इन दोनों व्यक्तियों का यहाँ तक का सफ़र हम एक साथ दिखा सकते हैं या अगर हम अंडे के छिलके का ही उदाहरण लें, (तो जिस समय वीना अंडा फ्राइंगपैन में डाल कर हलुआ बनाना शुरू करती है, उसी समय हम दिखा सकते हैं, घर के बाहर जमुना देवी रिक्शे से उतर कर उसे पैसे दे रही हैं। हम फिर दिखाते हैं, वीना का हलुआ लगभग बन गया है। उधर जमुना देवी घर के अंदर

घुस रही हैं, फिर हलुआ, फिर जमुना देवी, वगैरह-वगैरह।) इसी तरह की युक्ति कई बार पटकथा में नाटकीय तनाव बढ़ाने में काफ़ी मददगार होती है।

पटकथा की मूल इकाई होती है दृश्य। एक स्थान पर, एक ही समय में लगातार चल रहे कार्य व्यापार के आधार पर एक दृश्य निर्मित होता है। इन तीनों में से किसी भी एक के बदलने से दृश्य भी बदल जाता है। हम आपके पाठ्यक्रम में से रजनी का ही उदाहरण लेते हैं दृश्य-एक लीला बेन नामक महिला के फ़्लैट में शुरू होता है, समय शायद दोपहर का, क्योंकि उनका बेटा अमित स्कूल से वापस आने वाला है। दृश्य-दो अगले दिन, अमित के स्कूल के हैडमास्टर के कमरे में और वक्त फिर दिन का ही है। दृश्य-तीन उसी दिन, रजनी का फ़्लैट और वक्त है शाम का। ये सारे अलग-अलग लोकेशंस पर अलग-अलग दृश्य हैं।

मान लीजिए। पहले दृश्य में हम यह दिखाते कि रजनी और लीला बेन बातें करते-करते रसोईघर में चले जाते तो बावजूद इसके कि समय, कार्य-व्यापार, चरित्र सब एक ही हैं फिर भी दृश्य संख्या बदल जाती है क्यों? क्योंकि घटनास्थल बदल गया है। चलिए अब हम उस दृश्य को देखते हैं जहाँ रजनी अगर डायरेक्टर ऑफ़ एजुकेशन के कमरे के बाहर बैठी अपनी बारी आने की प्रतीक्षा कर रही है। अब मान लीजिए रजनी को 15-20 मिनट इंतज़ार करना पड़ता है इतनी देर का दृश्य सिर्फ़ रजनी के बैठे रहने का दिखाएँगे तो दर्शक बोर हो जाएँगे। अत: इस दृश्य की पटकथा कुछ इस प्रकार लिखी जाएगी-

दृश्य-चार

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(शिक्षा अधिकारी के कमरे के बाहर उसके नाम और पद की तख्ती लगी है, उसी के साथ मुलाकात का समय भी लिखा है। एक स्टूल पर चपरासी बैठा है। सामने की बेंच पर रजनी और तीन-चार लोग और बैठे हैं-प्रतीक्षारत। रजनी के चेहरे से बेचैनी टपक रही है। बार-बार अपनी कलाई में बँधी घड़ी देखती है, मिलने का समय समाप्त होता जा रहा है।)

रजनी : *(चपरासी से) कितनी देर और बैठना होगा?*

चपरासी : *हम क्या बोलेगा ...जब साहब घंटी मारेगा, ...बुलाएगा तभी तो ले जाएगा। बहुत बिज़ी रहता न साहब।*

रजनी : *(अपने में ही भुनभुनाते हुए) यह तो लोगों से मिलने का समय है, न जाने किसमें बिज़ी बनकर बैठ जाते हैं।*

(चपरासी दूसरी तरफ़ देखने लगता है।)

कट टू

दृश्य-पाँच

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(कैमरा ऑफ़िस के अंदर चला जाता है। साहब मेज़ पर पेपरवेट घुमा रहा है। फिर घड़ी देखता है, फिर घुमाने लगता है।)

कट टू

दृश्य-छह

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(वही बाहर वाली जगह, एक आदमी आता है। अपने नाम की स्लिप के नीचे पाँच रुपये का एक नोट रखकर देता है और चपरासी का कंधा थपथपाता है। चपरासी हँसकर भीतर जाता है। लौटकर उस आदमी को अंदर जाने का इशारा करता है। रजनी के चेहरे पर तनाव।)
(डिज़ॉल्व टू)

दृश्य-छह क

वही जगह/कुछ देर बाद

(रजनी अभी भी चपरासी को घूर कर देख रही है, जो मज़े से अपने स्टूल पर बैठा है। पिछले दृश्य में जो व्यक्ति घूस देकर भीतर गया था। वह अधिकारी के कमरे से बाहर निकलता है, मुसकराता हुआ जाता है। रजनी उठकर दनदनाती भीतर जाने लगती है।)
चपरासी! अरे-अरे... अरे! किधर कू जाता? अभी घंटी बजी क्या?
रजनी: *घंटी तो मिलने का समय खत्म होने तक बजेगी भी नहीं।* (*दरवाज़ा धकेल कर भीतर चली जाती है।*)
चपरासी: *अरे! कैसी औरत है... सुनतीच नई!*
(वहाँ बैठे दो-तीन लोग हँसने लगते हैं।)
कट टू

दृश्य-सात

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(दृश्य-पाँच वाला कमरा, निदेशक कुर्सी की पीठ से टिककर सिगरेट पी रहे हैं। रजनी को देखकर आश्चर्य से!)

इसी तरह कथानक को दृश्यों में बदलने का क्रम आगे बढ़ता जाएगा। यहाँ पर गौर करने लायक दो तरह की बातें हैं। पहली तो ये कि हमने किन आधारों पर दृश्य का बँटवारा किया। दृश्य संख्या-चार, पाँच, छह के कार्य व्यापार में निरंतरता है, लेकिन घटनास्थल में दो अलग-अलग दृश्य। इसी प्रकार दृश्य-छह और छह क का घटनास्थल एक ही है, लेकिन दोनों दृश्यों के बीच लगभग पाँच-दस मिनट का फ़ासला है, इसीलिए दो भिन्न दृश्य संख्या।

दूसरी गौर करने लायक बात है, पटकथा लिखने का विशिष्ट ढंग। हमेशा दृश्य संख्या के साथ दृश्य की लोकेशन या घटनास्थल लिखा जाता है—वो कमरा है, पार्क है, रेलवेस्टेशन है या शेर की माँद। उसके बाद लिखा जाता है घटना का समय—दिन/रात/सुबह/शाम। तीसरी जानकारी जो दृश्य के शुरू में दी जानी ज़रूरी होती है वो ये कि घटना खुले में घट रही है या किसी बंद जगह में, अंदर या बाहर? आमतौर पर ये सूचनाएँ अंग्रेज़ी में लिखी जाती हैं और अंदर या बाहर के लिए अंग्रेज़ी शब्दों इंटीरियर या एक्सटीरियर के तीन शुरुआती अक्षरों का इस्तेमाल किया जाता है, मतलब INT. या EXT.

ये पटकथा लिखने का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत प्रारूप है। सिनेमा या टेलीविज़न के कार्यक्रमों के निर्माण में कई टेक्निकल चीज़ों का सहारा लेना पड़ता है। पटकथा के शुरू में दिए गए संकेत फ़िल्म या टी.वी. के कार्यक्रम के निर्देशक, कैमरामैन, साउंडरिकॉर्डिस्ट, आर्ट डायरेक्टर, प्रोडक्शन मैनेजर तथा उनके सहायकों की अपने-अपने काम में काफ़ी मदद करते हैं। इसी प्रकार दृश्य के अंत में कट टू, डिज़ॉल्व टू, फ़ेड आउट आदि जैसी जानकारी निर्देशक व एडीटर को उनके काम में सहायता पहुँचाती है।

अब तो खैर! कंप्यूटर पर ऐसे सॉफ़्टवेयर आ गए हैं, जिनमें पटकथा लेखन का प्रारूप बना बनाया होता है, साथ ही साथ वो आपको ये बताने में भी सक्षम होते हैं कि आपकी पटकथा में कहाँ-कहाँ पर गड़बड़ रही है। अकसर उसे सुधारने के सुझाव भी आपको ये सॉफ़्टवेयर दे सकते हैं, उसे स्वीकार करना न करना आपकी सूझबूझ और इच्छा पर निर्भर करता है।

पाठ से संवाद

1. फ़्लैशबैक तकनीक और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीक के दो-दो उदाहरण दीजिए। आपने कई फ़िल्में देखी होंगी। अपनी देखी किसी एक फ़िल्म को ध्यान में रखते हुए बताइए कि उनमें दृश्यों का बँटवारा किन आधारों पर किया गया।

2. पटकथा लिखते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना ज़रूरी है और क्यों?